Gyanshauryam, International Scientific Refereed Research Journal
© 2021 GISRRJ | Volume 4 | Issue 3 | ISSN : 2582-0095

साठोत्तरी पीढ़ी के महत्वपूर्ण रचनाकार के रूप में ज्ञानरंजन के कथाकार–व्यक्तित्व की निर्मिति

डॉ. विशाल श्रीवास्तव
असिस्टेण्ट प्रोफेसर, हिन्दी विभाग,
राजकीय महाविद्यालय, पचवस, बस्ती,
उत्तर प्रदेश, भारत।

Article Info
Volume 4 Issue 3
Page Number: 45-51

Publication Issue :
May-June-2021

Article History
Accepted : 20 June 2021
Published : 30 June 2021

शोध–सार – साठोत्तरी पीढ़ी के महत्वपूर्ण कथाकार व 'पहल' पत्रिका के सम्पादक के रूप में ज्ञानरंजन का योगदान अप्रतिम है। बेहद कम लिखने के बावजूद ज्ञानरंजन का उत्कृष्टता का प्रतिमान बहुत ऊँचा और विशिष्ट है। ज्ञानरंजन की कहानियों में नैतिकता का कोई आग्रह नहीं है तथा आधुनिकता, परम्परा–बोध, अराजकता और गहरे साहित्यिक प्रशिक्षण से उनके व्यक्तित्व की निर्मिति सम्भव हुई है। ज्ञानरंजन हमारे समय और समाज के बदलाव के गहरे आब्जर्वर हैं, वे पूरी ताकत के साथ परिवर्तनों और विचलनों को न केवल दर्ज़ करते हैं बल्कि उससे सम्बद्ध यथार्थ को पूरी शिद्दत से और बिना किसी संकोच के अनावृत्त करते हैं। ज्ञानरंजन अपनी आरम्भिक विचारशीलता में बीटनिक कविता से गहरे तक प्रभावित थे, मध्यवर्गीय पाखंड के खिलाफ एक तीखा व्यंग्य उनकी कहानियों में इसलिए मिलता है क्योंकि वे एंटी इस्टैबलिशमेंट थे। ज्ञानरंजन की कहानियाँ मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों की आलोचनात्मक पड़ताल करती हुई कहानियाँ हैं और वे अपनी कहानियों में मानवीय अनुभवों के उत्स तक पहुंचने का सार्थक प्रयास करते हुए दिखाई देते हैं।

कूट–शब्द : नयी कहानी, ज्ञानरंजन, साठोत्तरी पीढ़ी, आधुनिकता, अराजकता, सातवाँ दशक, इलाहाबाद, नेहरूवियन समाजवाद, रूढ़िवाद, भारतीय मध्यवर्ग, पहल, सम्पादन।

ज्ञानरंजन जी के बारे में बात करते हुए सबसे पहले यह तथ्य याद आता है कि साठोत्तरी पीढ़ी के प्रतिनिधि रचनाकार ज्ञानरंजन के प्रिय कवि मुक्तिबोध हैं और ठीक उनकी तरह ही वे भी एक फैंटेसी का पीछा अपनी कहानियों में करते हैं। यह एक अनूठा संयोग है कि मुक्तिबोध की ही तरह ज्ञानरंजन का जन्म भी महाराष्ट्र में हुआ। उनके पिता अनुशासनप्रिय थे, लेखक, पत्रकार और स्वतंत्रता सेनानी पिता का अनुशासन घर में अत्यंत कठोर था, इतना कि घर में मिल का बना कपड़ा नहीं आता था। ऐसे कड़े अनुशासन में बिताए जीवन के कारण घर से एक मोहभंग की स्थिति उनकी कहानियों में दिखती है।

Copyright: © the author(s), publisher and licensee Technoscience Academy. This is an open-access article distributed under the terms of the Creative Commons Attribution Non-Commercial License, which permits unrestricted non-commercial use, distribution, and reproduction in any medium, provided the original work is properly cited

सातवें दशक के कहानीकारों में ज्ञानरंजन एक महत्वपूर्ण नाम हैं, वह भी तब जबकि उनकी कुल 25 कहानियों का ही जिक्र मिलता है, इसके अतिरिक्त संस्मरणों की एक किताब 'कबाड़खाना' है। एक कथाकार के रूप में उनका उदय उस समय हुआ जब नयी कहानी आंदोलन अपने उतार पर था और एक नयी पीढ़ी सामने आ रही थी। ख़ासतौर पर इसमें चार नाम– रवीन्द्र कालिया, दूधनाथ सिंह, ज्ञानरंजन और काशीनाथ सिंह चर्चित थे, जिनमें विजयमोहन सिंह को शामिल कर 'साढ़े चार यार' पद का प्रयोग प्रायः किया जाता है। यह दौर हिन्दी साहित्य के इतिहास में अकहानी आंदोलन के रूप में भी जाना जाता है। प्रायः यह प्रश्न उठता है कि ज्ञानरंजन या उनकी समूची पीढ़ी ने ऐसा क्या किया जो उन्हें उनके समय के रचनाकारों से अलग स्थापित करता है, यह सचमुच एक बड़ा प्रश्न है। दरअसल, ज्ञानरंजन की कहानियाँ मनुष्य के सामाजिक सम्बन्धों की आलोचनात्मक पड़ताल करती हुई कहानियाँ हैं और वे अपनी कहानियों में मानवीय अनुभवों के उत्स तक पहुंचने का सार्थक प्रयास करते हुए दिखाई देते हैं। ज्ञानंरजन के कथाकार की निर्मिति पर बात करते हुए कोई भी बात इलाहाबाद के बिना नहीं शुरू हो सकती, उनका और इलाहाबाद का रिश्ता अद्भुत है। सच तो यह भी है कि जब वे इलाहाबाद छोड़कर जबलपुर चले गये तो उनकी कहानी का सोता जैसे सूख सा गया। उनकी कहानियों में एक शहर के रूप में इलाहाबाद गहराई से रचा–बसा है। वे इलाहाबाद की यूनिवर्सिटी में पढ़ने वाले एक छात्र भर नहीं थे बल्कि इलाहाबाद शहर के असल साहित्यिक नागरिक थे। उस दौर के लेखकों को देखें तो साठ के दशक के इलाहाबाद का जो सांस्कृतिक–राजनैतिक माहौल था वह अत्यंत समृद्ध था, वहाँ के लेखक और संस्कृतिकर्मी वहां के वातावरण को किस तरह निर्मित कर रहे थे, यह ज्ञानरंजन के लेखन में साफ दिखाई देता है। उनके रचनासंसार और उनके व्यक्तित्व की निर्मिति में इलाहाबाद का महत्वपूर्ण दखल रहा है। इस संदर्भ में उनके मित्र नीलाभ ने लिखा है कि *''ज्ञान के पूरे तेवर को निर्मित करने में लूकरगंज की वही भूमिका थी, जो सिकन्दर के सिलसिले में एथेन्स की या वर्जीनिया वुल्फ और उनके साथी साहित्यकारों के सिलसिले में ब्लूम्ज़बेरी की।''*[1] उनका यह कहना अकारण या अनायास नहीं है, वह इलाहाबाद का स्वर्णिम दौर था जब शहर इलाचन्द्र जोशी, भैरव प्रसाद गुप्त, नरेश मेहता, शेखर जोशी, दूधनाथ सिंह, सतीश जमाली जैसे लेखकों का गढ़ था। उन दिनों वहाँ प्रगतिशील और परिमल गुट की अन्तर्धाराएं एकसाथ उपस्थित थीं। ज्ञानरंजन के अनुसार वे निर्मित हो रहे थे, वे नये रचनाकार थे और दो परम्पराओं को एक साथ एक–दूसरे के सामने खड़ा हुआ देख रहे थे और ऐसे में उनका निर्माण हुआ, उन्होंने परम्पराओं से सीखा। वे लिखते हैं *''हेमिंग्वे ने लिखा था कि मुझे सबसे ज्यादा पेरिस ने सिखाया। हमें भी इलाहाबाद ने।''*[2] उस समय का इलाहाबाद औपनिवेशकता के कारण आधुनिकता का भी शहर था। ज्ञान जी की कहानी 'अनुभव' में वर्णित मध्यवर्ग में यूरोप से आयातित आधुनिकता का प्रवेश दिखाई देता है और यह भी कि भारतीय परम्परा के सापेक्ष ज्ञानरंजन एक क्लैश को देख रहे थे। एक परम्पराग्रस्त शहर के आधुनिक शहर में बदलने का वह समय था, जो आजादी के बाद के नेहरूवियन समाजवाद से मोहभंग की हताशा, निराशा और संत्रास शहर के कई प्रतीकों के माध्यम से सामने आता है। वे इलाहाबाद के बंगलों, काफी हाउस सड़कों और वहां बिताई शामों का जिक्र करते हैं, वे आधुनिकता के उपभोक्ता भी हैं। ज्ञानरंजन अपने साहित्यिक दोस्तों के अतिरिक्त साहित्येतर दोस्तों जिनमें जुआरी तक शामिल थे, के साथ खासा वक्त बिताया करते थे, कुछ ऐसे ही अनुभवों से निर्मित उनकी कहानी 'घंटा' में वर्णित पेट्रोला है। 1964 में परिमल के सम्मेलन के साथ नयी कहानी का बोरिया बिस्तर बंध गया था। ज्ञानरंजन और उनके साथी लेखकों ने नयी कहानी के लेखकों को उनकी सीमाओं का एहसास कराया था। जिस युगबोध का दावा नयी कहानी कर रही थी, उसके वास्तविक विस्तार के रूप में यह

लेखक आए। ज्ञानरंजन अपनी आरम्भिक विचाशीलता में बीटनिक कविता से गहरे तक प्रभावित थे, मध्यवर्गीय पाखंड के खिलाफ एक तीखा व्यंग्य उनकी कहानियों में इसलिए मिलता है क्योंकि वे एंटी इस्टैबलिशमेंट थे। वे फैज को गाते और पसंद करते थे, तो एक तरफ उनके यहाँ रूमानीपन है तो दूसरी ओर गिन्सबर्ग और जैक बरोज जैसे अराजक तत्वों का प्रभाव है। ज्ञानरंजन ने लिखा है कि मुझे कहानी लिखने की प्रेरणा कविताओं से मिलती थी, वे लिखते हैं कि कई बार मैं अपने कमरे में जोर जोर से कविताओं का पाठ कर रहा होता था और तब मुझे कथा की सामग्री या प्रेरणा मिलती थी वे लोर्का का जिक्र करते हैं। बीटनिक कविता की अराजकता से साठोत्तरी पीढ़ी के चारों कथाकार प्रभावित हुए, लेकिन ज्ञानरंजन के बरक्स दूधनाथ सिंह हैं, जिन्होंने बहुत ज्यादा लिखा है, उनपर इस प्रभाव का रूप अलग है। एक साथ एक ही पीढ़ी के दो रचनाकारों की रचनाभूमियों में स्पष्ट अंतर है, वे बीटनिक कविता से अलग–अलग तरह से प्रभावित हैं। ज्ञानरंजन यदि व्यवस्थाविरोध को चुनते हैं तो दूधनाथ अनास्था के स्वर को। ज्ञानरंजन ने व्यवस्था विरोध को कहानी में खीझ, अवसाद और विद्रोह का रूप दिया, लेकिन इसके बावजूद समाज से गहरी संलग्नता भी बनाये रखी। सामाजिक सरोकार की अंतर्धारा से इस जुड़ाव के कारण कहानी में साफ और ठोस वैचारिकता का समावेश था, यही कारण है कि ये लेखक वामपंथी संगठनों से जुड़े। वैचारिक आग्रह का साफ होना साठोत्तरी लेखकों की विशेषता है, इस पीढ़ी के रचनाकार मध्यवर्गीय परिवारों की टूटन के आगे उनकी मृत्यु की कथा कहते हैं। 'अनुभव' कहानी में घर को आश्रम की संज्ञा देना इसका प्रतीक है। ज्ञानरंजन की सबसे प्रसिद्ध कहानी 'घंटा' मार्कण्डेय जी द्वारा प्रकाशित कथा पत्रिका के प्रवेशांक में प्रकाशित हुई थी, उसके बाद अनुभव और बहिर्गमन आयीं। 'घंटा' में पेट्रोला के प्रतीक से जिस अराजकता का वर्णन है उसे वे 'बहिर्गमन' में उन सामाजिक बदलावों तक विस्तारित करते हैं, जो हमें सत्तर के दशक में दिखते हैं। आपातकाल के नायकों का अवसरवाद और विचलन के परिवर्तन की आहट उनके लेखक ने पहले ही देख ली थी। एक मौलिक विचार के एक्सटेंशन के रूप में 'बहिर्गमन' महत्वपूर्ण कहानी है। 'अनुभव' को फ्लाप कहानी गया, लेकिन तत्वों का जो कथा विन्यास में संगुफन वहाँ मिलता है, वह अपूर्व है। ज्ञानरंजन ने लिखा है कि *''हिन्दी कहानी सौ साल पुरानी है, इन सौ सालों में हिन्दी कहानी का ढांचा टूट गया है। उसका विन्यास टूट गया है, चरित्र का त्रिकोण टूट गया है, प्रेम का सिद्धान्त टूट गया है और पाप और पुण्य की नैतिकताएँ बदल गयी हैं।''*[3] नयी कहानी में यदि देखें तो प्रेम का त्रिकोण जगह–जगह मिलता है, उदाहरण के तौर पर कमलेश्वर की कहानी 'राजा निरबंसिया' में त्रासदी होने के बावजूद उसकी उपस्थिति है।

ज्ञानरंजन की कहानियों में नैतिकता का कोई आग्रह नहीं है, नैरेटर 'मैं' नैतिकता के आग्रहों को नहीं मानता, वह बहुत आसानी से कुंदन सरकार का घण्टा बन जाने को तैयार हो जाता है। उतनी ही आसानी से वह बहिर्गमन में मनोहर के साथ जाने को तैयार हो जाता है। ज्ञान कहते हैं *''यथार्थ जिसको वास्तविकता कहते हैं, वास्तविकता को देखने के लिए भी आपके एक फैंटेसी की, एक स्वप्न की आँखों की जरूरत होती है। अगर आप स्वप्न नहीं देख सकते तो आप कहानी नहीं लिख सकते और यथार्थ नहीं लिख सकते।''*[4] मुक्तिबोध भी स्वप्नबोध का प्रयोग करते हैं, कहा जाता है कि मुक्तिबोध जीवन भर एक ही कविता लिखते रहे, कोई बेचैनी थी, कोई ऐसी बात थी, जो कहने से रह गयी थी, जिसे वह कहना चाहते थे। ज्ञान जी के साथ भी यह लगता है कि कोई अवसाद है जो एक कहानी में खत्म नहीं होता और दूसरी कहानी में बदली हुई शक्ल में सामने आ जाता है। ज्ञानरंजन कहते हैं कि *''करवट मेरी युवावस्था से शुरू हुई, बेचैनी और भगदड़ मच रही थी, भीतरी विखण्डन शुरू हुआ। नये साहित्य की शुरुआत हो रही थी। दुनियाभर की*

खिड़कियाँ खुलने लगीं, मन मचल रहा था। मन आश्रम से बाहर भागने को होता था। नये दोस्त और नयी किताबें आ रही थीं। शायद इसी तरह रचनाकार का सौंदर्यबोध बनता है इसी मंथन से उसकी रचना प्रक्रिया का बीज अंकुरित होता है और पौधे में तब्दील होता है।''[5]

प्रतिनिधि कहानियों की भूमिका में वे लिखते हैं *''मैं बचपन से ही उदास और आलसी रहा हूँ। यह मेरी आंतरिक बाधा और समस्या है इसलिए जब भी मैंने कोई कहानी लिखी, मुझे विस्मय हुआ अपने ऊपर और बहुत खुशी भी हुई कि मेरे जैसा कोई उदास और आलसी आदमी कहानी पूरी भी कर सकता है।''*[6] यहीं वे एक बड़ी रोचक बात करते हैं *''घण्टा लिखते समय मेरा दिमाग मार्सिलो मास्त्रियानी के चेहरे जैसा रहा होगा, जिसे देखने से लगता है कि उसे जन्म के साथ ही सबकुछ जान लिया होगा।''*[7] मार्सिलो इतालवी सिनेमा का बड़ा मशहूर और मक़बूल नाम है। इतालवी सिनेमा की नयी धारा के दो चर्चित निर्देशकों डी सीका और फेडरिको फेलिनी के वे प्रिय अभिनेता थे। इस फिल्म की कथा में घण्टा कहानी से गहरा साम्य है, मार्सिलो एक पत्रकार की भूमिका में फेलिनी की फिल्म ला डॉल्से विटा में रोम के उच्च समाज और खुशी या प्यार की खोज में सात रातें बिताता है। एक रचनाकार के रूप में ज्ञानरंजन ने कहाँ–कहाँ से प्रेरणा ली है, वह इससे स्पष्ट होता है। उनकी कथाभूमि में मौजूद नेहरू युग का मोहभंग समूचे साठोत्तरी दौर के कथा–संसार में बीजवपन का काम करता है, अमरकांत की कहानी हत्यारे में इसका संकेत है। एक तरह का निहिलिज्म, नकार या निषेधात्मकता इन कहानियों में मौजूद हैं, क्योंकि इन लेखकों के भीतर एक सच्चा सामाजिक विक्षोभ था, भीतर की सच्चाई से वे विचलित नहीं हुए इसीलिए अराजक आंदोलन से प्रभावित होकर भी मध्यवर्ग के पाखंड को उधेड़ देने में नग्न करने में ये संकोच नहीं करते। ज्ञानरंजन ने सभी मध्यवर्गीय संस्थाओं पर कटाक्ष किया है, हास्यरस कहानी विवाह संस्था पर व्यंग्य है। इस कहानी में अपनी प्रेमिका से विवाह कर अदालत से निकलता हुआ युवक अहाते के भीतर ही वीतरागिता और निरपेक्षता का शिकार होता जाता है और कहता है कि यदि मैं एक इलिसिट लवर होता तो ज्यादा अच्छा होता।

'पिता' कहानी काफी चर्चित कहानी है। एक पीढी जा रही है, जाती पीढ़ी का पिता आत्मसम्मान से भरा है, जो किसी के सामने अपनी तकलीफ को जाहिर नहीं होने देता। कहानी में रातभर बेचैन रहा पिता जो चिन्ताओं में डूबा है, इस बात से कहीं आश्वस्त है कि उनके संरक्षण में पूरा परिवार चैन की नींद सो रहा है। अपने नौकरीशुदा बेटे का भी अहसान न लेने की जिद इस कहानी में सामने आती है। हिन्दी कहानी में प्रेमचन्द के बाद ज्ञानरंजन ही ऐसे कहानीकार हैं जिनके चरित्रों के नाम इतनी आसानी से याद रह जाते हैं चाहे वह मनोहर हो, सोमदत्त हो, कुंदन सरकार हो, ये चरित्र हमारे दिलोदिमाग से चिपक जाते हैं। जिस सामाजिक सम्बंध की परिकल्पना ज्ञान करते हैं और जिस मध्यवर्ग की परम्पराओं के ढहते जाने और टूटने की बात करते हैं, उसके बारे में बाते करते हुए पिता कहानी के सम्बन्ध में ज्ञानरंजन का कहना है कि *''उस अनिवार्य दूरी से मैं इस कहानी को लिख सका जो एक प्रेममयी कहानी है ..... मारक्वेज ने अपने एक उपन्यास के बारे में हैरत और विस्मय से बताया है कि सारे अमरीका में उसके उपन्यास का बेहद गलत पाठ पढ़ाया गया है।''*[8] मध्यमवर्गीय परिवारों में पिता पुत्र के बीच अबोलेपन के बीच छिपे हुए प्रेम की कहानी है, पिता का प्रेम दिखाई नहीं देता।

सम्बंध कहानी बाद की कहानी है, जिसमें एक अलग तरह की अराजकता है। इस कहानी में एक खीझ है, वे अपने भाई का जिक्र है, जिसके बारे में लेखक कहता है कि अगर वह आत्महत्या कर ले तो बहुत सारी समस्याओं का समाधान हो जाए। इस कहानी के बारे में उनका कथन है कि वह समाधान की कहानी या फिलॉसोफी नहीं है बल्कि एक परिवार की समस्या है। घर से विरक्ति की बात यहां भी है *'' यह*

कितना अविश्वसनीय लगता है कि दिन भर के बाद लौट कर यूं ही मैंने अपने घर की इमारत देखी मैं हताश हो गया शायद में गाफिल था और सनक में मुझे यहां अंदाज भी नहीं हुआ कि चलते हुए मैं अपने घर की तरफ ही जा रहा हूँ। मैंने अपने घर की तरफ फिर देखा और कल्पना करिए इस भयानकता की कि मैं सोचता रहा यह एक बिल्डिंग है और इसके अंदर मुझे जाना है।'[9] इसी कहानी में आगे वर्णित माँ के चेहरे से ऊब धूमिल की कविता की याद दिलाती है।

'फेंस के इधर और उधर' कहानी में समाज के बदलाव में दोहरे स्तरीकरण के संकेत मिलते हैं। रूढ़िवादी परिवार और आधुनिकतावादी परिवार के अंतर को दिखाती है। दोनों घरों के बीच एक मिट्टी की फेंस है लेकिन यह एक सीमारेखा का प्रतीक है कि तनिक सी इस दूरी में जैसे एक ही दुनिया में दो अलग–अलग संस्कृतियाँ रह रही हैं। ज्ञान इस कहानी के माध्यम से भारतीय मध्यवर्ग के परम्परावादी पोंगापंथ की सीवनों को उधेड़ने का काम करते हैं। इस कहानी के अंत में वे लिखते हैं '' रात शाम का केंचुल उतार रही है। फैंस के पार टेबल के इर्द–गिर्द बैठे लोग उठ उठ कर बिखर गए। रोज की तरह पड़ोसी के निचले कमरे में बिजली का लट्टू जल गया है। दरवाजों के कोनों के बचे हुए हिस्सों पर मखमली रोशनी धब्बों की तरह चिपकी है, उनकी रात शांत और नियमानुसार हो चली है। पता नहीं उन्हें घर में एक व्यक्ति का कम हो जाना कैसा लग रहा होगा, हमारे घर तो पड़ोसी निंदा का बाजार बहुत गर्म है।''[10]

'घंटा' कहानी पेट्रोला के वर्णन से शुरू होती है। यह कहना गलत न होगा कि ज्ञानरंजन इलाहाबाद से जबलपुर क्या चले गए वे अपना पेट्रोला इलाहाबाद में ही छोड़ गये और शायद यही कारण है कि फिर कहानियां नहीं लिख पाए। कुंदन सरकार और पेट्रोला इस कहानी के दो सशक्त चरित्र हैं। पेट्रोला एक अमूर्त किस्म की जगह है, जिसके बारे में कुछ साफ साफ नहीं कहा जा सकता है। वह एक ऐसी जगह है जहां कुछ अराजक किस्म के मित्र कुछ अपनी मनमर्जी का काम कर लेते हैं। वे लिखते हैं कि ''ऐसा लगता है पेट्रोला की जिंदगी के बाहर चले जाना काफी मुश्किल हो गया है। यह जगह एक राहत स्थान में बदल गई थी। पेट्रोला से निकलकर शहर के उस क्षेत्र से अपने कमरों को जब हम वापस होते तो शहर का ढांचा दिखाई देता था। हमें पूरा विश्वास है कि हम उससे अधिक शहर के ढांचे के बारे में कम लोग जानते होंगे। मेरे साथियों को बीवी–बच्चों समाज और देश दुनिया से शायद ही कोई ताल्लुक रह गया था, वे लोग एंटी नहीं थे स्वाभाविक थे''[11] कथा में कुंदन सरकार का प्रतीक उस वर्ग का प्रतीक है जो बुद्धिजीविता का खोल ओढ़े नये युग के दलाल हैं। ऐसा लगता है कि ज्ञानरंजन ने अपने समय में मौजूद बहुत सारे लोगों का कैरीकेचर तैयार कर कुंदन सरकार का चरित्र गढ़ा है। आज भी ऐसा लगता है कि चारों तरफ कुंदन सरकार जैसे लोगों ने हमें घेर रखा था। घंटा बनने के बावजूद लेखक के मन में पेट्रोला मौजूद है। कुंदन अपने साथ रखने के बावजूद घंटा की हैसियत को कम करके आंकता है। वह अपनी निरीहता से व्यथित है इसीलिए वह एक दिन विद्रोह का तय करता है और उच्चवर्ग के प्रतीक रेस्तरां में उस आडम्बर और वैभव के बीच वह खिस्स से हंस देता है। वे लिखते हैं *''मैंने गौर किया कि पहले से ही स्थिति बेहतर अवश्य हुई है पहले मैं केवल मुस्कुराता था जिसे संसार एक चुटिया पर है और मैं उसे समझ गया हूं हालत यहां तक पहुंची किस मुस्कुराहट के कारण में गूंगा समझा जाने लगा था इस शाकाहारी मुस्कुराहट से सत्ता का तो कुछ बिगड़ता नहीं दमदार मुस्कुराहट तो राजा की होती है महंत की होती है औरत की होती है और खतरों से मुक्त जिनका चमन है उनकी होती है''*[12] इस कथन के माध्यम से कहानी में मौजूद मध्यवर्ग के नकली यथार्थ की परतों को उघाड़ने का काम ज्ञानरंजन सम्भव करते हैं। कहानी के अंत में धकिया कर

फेंक दिये जाने के बाद नैरेटर कहता है *''इस प्रकार कुंदन सरकार का घंटा सड़क पर गिर पड़ा। जिस तरह से भीड़ भरी सड़क पर साइकिल से गिरने वाले सवार को कभी चोट नहीं लगती वैसी मेरी हालत थी झाड़–पोंछकर मैं सड़क पर आया जो काफी सन्नाटी थी। क्रांति–तरंग नदारद हो चुकी थी नाक से लार की तरह जुकाम गिरने लगा। चलता हुआ सीधा मैं अपनी पुरानी जगह पेट्रोला आके साथियों में पहुंचा। मुझे देखकर उन्होंने एक हल्का ठहाका मारा। इसके अलावा कोई दूसरा बुरा सुलूक उन्होंने नहीं किया।''*[13] पेट्रोला युवा वर्ग की निराशा और कुण्ठा का एक प्रतीक है जिसे ज्ञानरंजन ने बहुत ठोस सच्चाईयों के साथ गढ़ा है।

बहिर्गमन एक महत्वपूर्ण कहानी है क्योंकि वह छोटे शहरों से बड़े शहरों और वहां से राजधानी को हो रहे विस्थापन का बयान करती है। इस कहानी में छोटे शहर के कुंदन सरकार जैसे दलाल से आगे बढ़कर राजधानियों को अन्तरराष्ट्रीय दलाल दिखाई देते हैं जिन्होंने जनसेवा का चोला पहन रखा है। यह कहानी राजनैतिक कदाचार का दस्तावेज है। मनोहर और सोमदत्त के चरित्र इस नयी राजनीति का प्रतीक हैं, जिसके माध्यम से एक देश के रूप में निर्मित हो रहे भारत की स्थितियों की पड़ताल है। इस कहानी में वे लिखते हैं *''मैंने धूल को बहुत देर तक नहीं रहने दिया एक आहत व्यक्ति की तरह मैंने सपाटे से धूल को खत्म करके अपना काम शुरू कर दिया। मैं सुस्त नहीं पड़ना चाहता था। अगर मैं बारीकी से पड़ताल करूं तो संभव है या नतीजा निकले कि जिस दिन मनोहर गया उसी दिन मेरे अंदर भी एक विस्फोट हुआ– एक शांत विस्फोट। मैंने पाया, मैं मनोहर का पीछा कर रहा हूं थोड़ी दूर तक यह पीछा चलता रहा है, फिर गड़बड़ हो जाता है। मैं बराबर सोच रहा हूं कि एक उबलते हुए युवाकाल में इस आदमी ने अपनी यात्रा कितने भोले और अशुद्ध तरीके से क्यों शुरू की?यह प्रश्न मेरे अंदर लगातार टपकता रहा। यह मेरी विचित्र तबीयत है कि जिन लोगों पर मुझे शक हो जाता है उन्हें मैं छोड़ नहीं पाता। उनकी पूरी कलई मेरे लिए जरूरी हो जाती है।''*[14] इसी कहानी में वे आगे लिखते हैं, *''वास्तव में हमारे बहुत से साथियों में तमाचा खाकर भी विचलित होने की अद्भुत कुव्वत थी। वे कदम मिलाने के लिए बौखलाए हुए दौड़े चले जा रहे थे। इसलिए यह मान लेना मूर्खता होगी कि अपने समय के सभी लोगों को जान लिया गया है मैंने तय किया कि मैं शंकास्पद स्थिति में नहीं रहूंगा। मुझे इन लोगों के बारे में अपने इस यकीन को खोजना है कि ये जीवन की अटूट श्रृंखला को तोड़ने की घात में लगे हुए हैं''।*[15]

ज्ञानरंजन हमारे समय और समाज के बदलाव के गहरे आब्जर्वर हैं, वे पूरी ताकत के साथ परिवर्तनों और विचलनों को न केवल दर्ज़ करते हैं बल्कि उससे सम्बद्ध यथार्थ को पूरी शिद्दत से और बिना किसी संकोच के अनावृत्त करते हैं। यह प्रश्न भी प्रायः उठता है कि ज्ञान जी ने बहुत कम लिखा है, इस बारे में उनका कहना है, *''मित्रो जब आप सच्चाईयों को स्पष्ट और नंगा देख लेते हैं तो फिर लिखना अवरुद्ध हो जाता है। यथार्थ की यही सीमा है। बस स्मृतियों की बहार में जाइए और सुस्ताइए। ..... मैं उस पंक्ति का लेखक था जो पात्रों को जन्म भी देता है और उन्हीं की कब्र भी बनाता है। यह एक दुस्साहस है। यह पाठ बकाया है। और ऐसा लेखक जल्द बन्द हो जाता है।''*[16] इसी सन्दर्भ में आधुनिकता के बारे में अपना विचार स्पष्ट करते हुए वे कहते हैं कि *''मैं जिस आधुनिकता की चपेट में था वह भग्न हो रही थी, उसका क्रांति और ज्ञानोदय से सम्बन्ध टूट चुका था।''*[17]

'पहल' पत्रिका के सम्पादक के रूप में ज्ञानरंजन की भूमिका उनके कथाकार रूप जितनी ही उल्लेखनीय है। पिछले कई दशकों से यह पत्रिका आंदोलन के रूप में हिन्दी संसार में अपना विशिष्ट स्थान रखती है। 'पहल' सार्थक लेखक को सामने लाने का प्रयास करती रही है। ज्ञानरंजन की इस पत्रिका पर

कई आरोप भी लगे हैं, उन आरोपों पर अपना उत्तर देते हुए ज्ञानरंजन ने अपने एक साक्षात्कार में कहा है *''पहल वामपंथ के सभी धड़ों और लोकतांत्रिकों का प्यार और सहयोग पाती रही है, यही उसकी प्राणशक्ति है। दक्षिणपंथ, कलावाद, फासीवाद के विरुद्ध 'पहल' का रचनात्मक संसार कभी लड़खड़ाया नहीं।''*[18] वे यह भी स्पष्ट करते हैं कि अन्य पत्रिकाओं और सम्पादकों की भाँति पहल ने कभी लेखकों को पैदा करने का दावा नहीं किया, *''पहल के लेखकों का एक सार्वभौम रहा है और आज़ादी। 'पहल' को यह सुख प्राप्त है कि उसका कोई खेमा नहीं है, लेखकों को पट्टे नहीं पहनाये जा सकते।''*[19]

समग्रतः यह कहा जा सकता है कि साठोत्तरी पीढ़ी के महत्वपूर्ण कथाकार व 'पहल' पत्रिका के सम्पादक के रूप में ज्ञानरंजन का योगदान अप्रतिम है। बेहद कम लिखने के बावजूद ज्ञानरंजन का उत्कृष्टता का प्रतिमान बहुत ऊँचा और विशिष्ट है। आधुनिकता, परम्परा–बोध, अराजकता और गहरे साहित्यिक प्रशिक्षण से उनके व्यक्तित्व की निर्मिति सम्भव हुई है।

सन्दर्भ–सूची :

1. ज्ञानरंजन के बहाने, नीलाभ, नयी किताब, दिल्ली, 2013, पृष्ठ 22
2. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 30
3. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 19
4. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 20
5. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 25
6. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 5
7. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 5
8. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 27
9. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 73
10. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 88
11. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 103
12. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 109
13. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 113
14. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 115
15. प्रतिनिधि कहानियाँ, ज्ञानरंजन, राजकमल प्रकाशन प्रा. लि., 1984, पृष्ठ 116
16. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 109
17. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 110
18. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 150
19. उपस्थिति का अर्थ, ज्ञानरंजन, सेतु प्रकाशन प्रा. लि., 2020, पृष्ठ 159